वैज्ञानिक एवं तकनीकी भाषा के रूप में हिन्दी भाषा का स्वरूप

डॉ. विद्यासागर उपाध्याय

संस्कृत भाषा से निःसृत हिन्दी ऐसी भाषा है जो अनेक बोलियों के रूप में उत्तर भारत और मध्य भारत की मातृभाषा है। वह कई बोलियों और उपभाषाओं से प्रभावित होने के कारण समन्वयात्मक है। हिन्दी की सभी उपभाषाएँ और बोलियाँ हिन्दी के व्यापक अर्थ में आ जाती हैं। वस्तुतः हिन्दी शब्द उतना एकरूप भाषा के रूप में व्यवहृत नहीं होता जितना परम्परा के अर्थ में होता है। भाषा और विज्ञान अविच्छिन्न रूप से समवेत् है। भाषा के बिना तथ्यों की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती। इसलिए भाषा को सभी तथ्यपरक विषयों से असम्बन्धित नहीं किया जा सकता है। हिन्दी भाषा में विज्ञान के साहित्य का अभाव है। अतएव वैज्ञानिक उपलब्धियों को अनुवाद के द्वारा प्रकाशित करने के प्रयास किए गए हैं ताकि वैज्ञानिक उपलब्धियों को जनमानस तक पहुँचाया जा सके। भाषा प्राकृतिक और कृत्रिम रूपों में दो प्रकार की होती है। प्राकृतिक भाषा वह है जो स्वतः स्फुटित हो और स्वाभाविक रूप से जनसामान्य की भाषा हो। कृत्रिम भाषा विज्ञान की भाषा होती है जो वैज्ञानिकों द्वारा निर्मित की जाती है। विज्ञान जितना ही सुनिश्चित और असंदिग्ध होता है उतना ही वह शब्द को अनेकार्थता से हटाकर एकार्थता की ओर लाता है।

विज्ञान के विकास के साथ–ही–साथ शब्दों (पारिभाषिक शब्दावली) का विकास भी आवश्यक है। विश्व में जो भी नयी वस्तुएँ आयेगीं उनको प्रकट करने के लिए नये शब्द देने पड़ेगे। वैज्ञानिक साहित्य ज्ञानमीमांसीय होता है। अतएव उसकी मूल प्रवृत्ति सूचनात्मक और विवेचनात्मक होती है। अपने उद्देश्य की अभिपूर्ति के लिए वैज्ञानिक साहित्य का लेखक सुनिश्चित अर्थवाली पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग करता है। इस शब्दावली का अर्थ सुनिश्चित होता है जिसे विज्ञान का अध्येता उसी रूप में ग्रहण करता है। इस शब्दावली के प्रयोग के कारण प्रत्येक विज्ञान की अपनी भाषा होती है। अतः वैज्ञानिक और तकनीकी साहित्य में भाषा के साथ मनचाहा प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

आज के वैज्ञानिक युग में वही भाषा लोकप्रिय होगी जिसका व्याकरण विज्ञान संगत होगा, जिसकी लिपि कम्प्यूटर की लिपि होगी। हिन्दी भाषा इस दृष्टि से समृद्ध है। भारत में **'चाल्स विल्किन्स'** और **'पंचानन कर्मकार'** के द्वारा 1770 ई0 में देवनागरी लिपि के टाइप का विकास हुआ। टाइप के विकास के बाद हिन्दी में पुस्तकों, पत्रिकाओं, समाचार–पत्रों की संख्या में वृद्धि हुई। मोनो और लाइनों की मदद से हिन्दी के टाइप और पूरी पंक्यिाँ डालने की सुविधा ने भी प्रकाशन उद्योग को बढ़ावा दिया। अब आफसेट पद्धति से छपाई शीघ्र हो जाती है।

दिल्ली में केन्द्र सरकार के हिन्दी निदेशालय एवं वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग के केंद्रीय कार्यालय होने के कारण उनके समस्त तकनीकी प्रकाशन स्वतः ही उपलब्ध हो रहे है। इस सम्बन्ध में भारत सरकार द्वारा सन् 1865 ई0 में प्रकाशित 'वृहत प्रशासन शब्दावली' और 'विधि शब्दावली' के नाम रेखांकित करने योग्य हैं।

उल्लेखनीय है कि सन् 1979 में संघ लोकसेवा आयोग ;न्च्ब्द्ध द्वारा भारतीय प्रशासनिक सेवा परीक्षा के सभी प्रश्नपत्रों के लिए हिन्दी तथा अष्टम सूची में उल्लिखित अन्य भारतीय भाषाओं को माध्यम के रूप में अपनाने की सुविधा दे दिए जाने के कारण हिन्दी को वैज्ञानिक एवं तकनीकी भाषा के रूप में विकसित करने की दिशा में विभिन्न स्तरों पर ठोस प्रयास होने लगा।

इसी क्रम में भारत सरकार द्वारा सन् 1850 ई0 में वैज्ञानिक शब्दावली मंडल की स्थापना की गयी। इसने दस वर्ष की अवधि में हिन्दी में तीन लाख वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्द तैयार किए जिन्हें सन् 1961 में केंन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय की ओर से 'पारिभाषिक शब्द संग्रह' के रूप में प्रकाशित किया गया। इसी वर्ष अक्टूबर 1961 ई0 में केंन्द सरकार ने 'वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग' का गठन किया जो विज्ञान की सभी शाखाओं से सम्बन्धित पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण एवं प्रकाशन कर चुका है। इस दिशा में नित्य नवीन अपेक्षाओं के अनुरूप उपयुक्त शब्दावली के निर्माण में पूरी तन्मयता से लगा हुआ है।

इस सम्बन्ध में यह भी द्रष्टव्य है कि तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा रक्षा, डाक–तार विभाग, रेलवे आदि से सम्बन्धित शब्दावलियों के अतिरिक्त वनस्पति विज्ञान, प्राणि विज्ञान और भू–विज्ञान सम्बन्धी पारिभाषिक शब्दकोष भी तैयार कराये गये हैं। आयोग के तत्वाधान में ही रूड़की व पंतनगर जैसे चयनित विश्वविद्यालयों में अलग–अलग प्रकोष्ठ स्थापित किये गये। इनके सहयोग से आयुर्विज्ञान जैसे अनुप्रयुक्त ;।चचसपमकद्ध विज्ञानों से सम्बन्धित तकनीकी शब्दकोश (अठारह हजार शब्द) तैयार कराये गये। इसके अतिरिक्त हिन्दी माध्यम से पशु चिकित्सा और भेषजी आदि के शिक्षण हेतु पुस्तकें भी प्रकाशित करायी गयी हैं।

आयोग द्वारा 'ज्ञान सिंधु गरिमा' और 'विज्ञान सिंधु गरिमा' नामक दो पत्र भी निकल रहे हैं। अन्या जो महत्वपूर्ण दायित्व आयोग द्वारा निभाया जा रहा है उनमें हिन्दी भाषी राज्यों के विश्वविद्यालयों के शिक्षकों को हिन्दी की नवनिर्मित व वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली से परिचित कराने के लिए समय–समय पर अलग–अलग स्थानों पर विभिन्न गोष्ठियों का आयोजन विशेष उल्लेखनीय है। इससे व्यवहारिक और अनुप्रयोग तक स्तर पर वैज्ञानिक और तकनीकी भाषा के रूप में हिन्दी के विकास प्रक्रिया को निश्चित रूप से बल मिलेगा।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 351 में संघीय सरकार को हिन्दी के प्रचार–प्रसार का दायित्व तथा विकास का दिशा संकेत देते हुए कहा गया है–

''जहाँ आवश्यक अथवा वांछनीय हो वहाँ उसके (हिन्दी के) शब्द भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से तथा गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करना संघ का कर्त्तव्य होगा।'' इसी दिशा निर्देश के आधार पर संघ शिक्षा मंत्रालय ने 'केन्द्रीय शिक्षा परामर्श मंडल' की सिफारिश पर 1850 में एक 'वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली बोर्ड' का गठन किया।

सन् 1852 में शिक्षा मंत्रालय के अन्तर्गत एक 'हिन्दी–अनुभाग' की स्थापना की गयी। इस अनुभाग द्वारा तकनीकी शब्दावली के कई संग्रह तैयार किये गये और उनकी प्रामाणिकता की पुष्टि के लिए विषयानुसार अलग–अलग विशेषज्ञ समितियों का गठन किया गया। कार्य विस्तार होने के कारण हिन्दी अनुभाग को हिन्दी प्रभाग का दर्जा दे दिया गया जिसके अन्तर्गत हिन्दी के वैज्ञानिक व तकनीकी भाषा के रूप में विकास के लिए विधि स्तरों पर बहुआयामी योजनाएँ हाथ में ली गयीं जिनमें नागरी टंकण यंत्र के मानक कुंजीपटल के निर्माण और वर्तनी के मानवीकरण की प्रक्रिया भी शामिल थी।

इस विषय में सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रस्थान बिन्दु था 1 मार्च 1960 को केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की स्थापना। इसे सर्वप्रथम वैज्ञानिक शब्दावली और पारिभाषिक कोश के निर्माण का कार्य सौंपा गया। हिन्दी अनुभाग और हिन्दी प्रभाग द्वारा संरक्षित जो तीन लाख पारिभाषिक शब्द विषयानुसार अलग–अलग संग्रहों के रूप में छप चुके थे उन्हीं को 01 अक्टूबर 1961 में गठित वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग ने समेकित रूप से एक लाख प्रविधियों वाले पारिभाषिक शब्द संग्रह नाम से प्रकाशित किया।

प्रारंभ में विधि सम्बन्धी पारिभाषिक शब्दावली का कार्य शिक्षा मंत्रालय के अन्तर्गत केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय कर रहा था। बाद में यह कार्य विधि मंत्रालय को सौंप दिया गया। इसी प्रकार 'राजभाषा विभाग' के कार्य कलाप जब गृह मंत्रालय के अधीन आ गये तो इसी के तत्वाधान में **'केंद्रीय अनुवाद व्यूरो'** की स्थापना की गयी तथा प्रशासनिक साहित्य के अनुवाद का दायित्व उसे दिया गया। केंद्रीय हिन्दी निदेशालय ने विभिन्न पारिभाषिक शब्दकोश तैयार कराने के अतिरिक्त विविध भारतीय भाषाओं में अन्तःसम्बन्ध स्थापित करने के लिए अनेक द्विभाषी और त्रिभाषी कोश भी तैयार कराये हैं जिनकी संख्या दो दर्जन से अधिक है। इसी प्रकार 'हिन्दी संयुक्त राष्ट्र संघ भाषा कोश' सम्बन्धी योजनान्तर्गत हिन्दी–अरबी–हिन्दी–चीनी, हिन्दी–फ्रांसीसी एवं हिन्दी–स्पेनी आदि कोश नागरी लिपि में तैयार कराये गये हैं। भाषाविज्ञान से भाषा–शिक्षण को संबद्ध कर जैसे लाभ उठाया जाना चाहिए, वैसे लाभ नहीं उठाया गया है। भाषाशिक्षण की कई शाखाएं हैं और यह शिक्षण–प्रविधियों के अंतर्गत भी है। इस रूप में 'भाषाविज्ञान' को 'भाषा शिक्षण' से संबद्ध

करने की और भाषाविज्ञान से लाभ उठाने की आवश्यकता है। डॉ0 रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव इस दिशा में आगे बढ़ रहे थे, किन्तु असमय में उनका निधन हो गया। उन्होंने 'भाषा शिक्षण' पर स्वतंत्र पुस्तक लिखी है। उसका प्रकाशन 1979 ई. में (प्रथम संस्करण) हुआ है। दूसरा संस्करण 1992 ई. में प्रकाशित हुआ। दूसरे संस्करण के 'दो शब्द' के अंतर्गत डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव विषय की महत्ता ज्ञापित करते हुए लिखते हैं– ''शिक्षार्थी केंद्रित होने के कारण भाषाशिक्षण की धुरी आज भाषा अर्जन और भाषा अधिगम के सिद्धांत बन गये हैं। साथ ही भाषा अध्ययन के क्षेत्र में उसकी प्रकार्यात्मक और संप्रेषणात्मक दृष्टि ने रूप रचना और व्याकरणिक व्यवस्था को अपना साधन बना लिया है। आज हम भाषिक क्षमता के साथ–साथ संप्रेषणपरक दक्षता की बात करते हैं। परिवर्तन की इन दिशाओं ने भाषाशिक्षण की इधर कई नयी विधियों को जन्म दिया है।[1]

सस्यूर ने भाषाओं के अध्ययन के दो आधार माने हैं। वे हैं– (1) समकालिक या संकालिक ;लदबीतवदपबद्ध और (2) ऐतिहासिक ;क्पंबीतवदपबद्ध। उनका मानना है कि दोनों ही प्रकार का अध्ययन अलग–अलग है। समकालिक या संकालिक अध्ययन भाषा की व्यवस्था को बतलाने वाला होता है। भाषा की मानक–स्थिति क्या है ? उसका स्वरूप क्या है ? यह सब बतलाना संकालिक अध्ययन का काम है। इसके अंतर्गत भाषा का व्याकरण प्रधान रूप से रहता है। व्याकरण के आधार पर ही भाषा के विधान को, उसके नियमों को जाना जा सकता है। डॉ. रामविलास शर्मा ने 'पश्चिमी एशिया और ऋग्वेद' (1994 ई. में प्रकाशित) पुस्तक लिखी है। यह पुस्तक ऐतिहासिक भाषाविज्ञान पर नया प्रकाश डालती है। इसकी प्रस्तावना में डॉ. शर्मा ने लिखा है– सरस्वती भारत के प्राचीन इतिहास की कालविभाजक रेखा है। आर्य आक्रमण सिद्धान्तवादियों के लिए उसे लांघ पाना संभव नहीं है।[2]

इधर प्रायः सभी हिन्दी भाषी राज्यों की विभिन्न अकादेमी, संस्थान और प्रकाशन विभाग हिन्दी को वैज्ञानिक व तकनीकी भाषा के रूप में समृद्ध करने के लिए असंख्य महत्वपूर्ण ग्रंथ प्रकाशित कर चुके हैं। कहने का आशय है कि आज हिन्दी वैज्ञानिक एवं तकनीकी भाषा के रूप में विकसित हो चुकी है और यह प्रक्रिया अनवरत चल रही है। इस संदर्भ में वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद ;ब्व्द्ध की पत्रिका **'विज्ञान–प्रगति'**, विज्ञान परिषद प्रभाग की **'अनुसंधान'** पत्रिका एवं राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी द्वारा प्रकाशित **'रसायन समीक्षा'** आदि पत्रिकाओं का योगदान उल्लेखनीय है। हिन्दी को वैज्ञानिक एवं तकनीकी भाषा के रूप में विकसित करने तथा समृद्ध बनाने की दृष्टि से आज सर्वाधिक महत्व सूचना प्रौद्योगिकी का है। इस संदर्भ में आकाशवाणी, दूरदर्शन तथा मुद्रित पत्रकारिता संबंधी विवेचना उल्लेखनीय है। अब इसमें सूचना क्रांति के विस्फोट के रूप में कम्प्यूटर, ई–मेल, इंटरनेट वेबसाइट आदि को शामिल किया जा सकता है।

समस्याएँ व समाधान–

उपर्युक्त विस्तृत विवेचना के अनुसार हिन्दी के वैज्ञानिक और तकनीकी भाषा के विकसित और समृद्ध होने के बावजूद भारतीय जन–मानस में हिन्दी की अक्षमता अपूर्णता और तकनीकी न्यूनता का भ्रम अधिकाधिक बढ़ते जाना निःसंदेह आश्चर्य और चिन्ता का विषय है। विडम्बना यह है कि जिन विद्यालयों, महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों में कभी बड़े जोर–जोर से हिन्दी माध्यमों से विभिन्न विषयों–विशेषतः वैज्ञानिक और तकनीकी विषयों की शिक्षण योजनाएँ शुरू की गयी थीं वहाँ भी अब अंग्रेजी माध्यम को अनिवार्य समझा जाने लगा है। यही स्थिति विभिन्न संस्थानों और कार्यालयों में हिन्दी के अनुप्रयोग की है। इसके अनेक कारण देखें जा सकते हैं–

;पद्ध इस समस्या को शिक्षित समुदाय या कर्मियों द्वारा बढ़ा–चढ़ा कर पेश किया जाता है तथा हिन्दी माध्यम या प्रयोग का जिक्र आते ही नाक भौंह सिकोड़ना एक फैशन बन गया है।

;पपद्ध इसका एक प्रमुख कारण विभिन्न संचार माध्यमों जिनमें इलेक्ट्रानिक मीडिया, मल्टी मीडिया आदि द्वारा जाने अनजाने अन्तर्राष्ट्रीयतावाद का नारा देकर भारतीय युवाओं में हीनता की भावना उत्पन्न किया जाना तथा उन्हें यह समझाया जाना कि अंगरेजी के बगैर बेहतर रोजगार संभव नहीं है।

;पपपद्ध उपर्युक्त दोनों समस्याओं के मूल में देश, समाज व शिक्षा जगत के कर्णधारों का प्रमाद है जिन्हें राजनैतिक लाभ व आर्थिक लाभ की पूर्ति के स्वार्थ में युवाओं को ठोस व मजबूत वैचारिक आधार उपलब्ध कराने की फुर्सत नहीं है।

;पअद्ध इसका एक और प्रमुख कारण यह भी है कि वैज्ञाानिक एवं तकनीकी विषयों के विभिन्न विशेषज्ञों और शब्द–अर्थ को मर्मज्ञ भाषाविदों में परस्पर कोई तालमेल नहीं है। इन दोनों के तालमेल के अभाव में हिन्दी में या तो बहुत क्लिष्ट तकनीकी साहित्य तैयार हो रहा है अथवा अधकचरा और अर्थच्युत शब्द कौतुक चल रहा है।

;अद्ध इसमें भी अधिक दोष हिन्दी साहित्य के कथित सर्जकों का है। युवा शब्दकार प्रायः तुक जोड़ने, कहानियाँ गढ़ने और संवाद रचने में तो व्यस्त हैं, हिन्दी के माध्यम से नयी पीढ़ी को वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान उपलब्ध कराने की रूचि या फिक्र किसी को नहीं। साथ ही जिस हिन्दी के शब्द–भण्डार की बदौलत वे अपनी साहित्यिक उपलब्धियों के महल खड़े करने में लगे हैं उसी को दीन हीन बताने में उन्हें थोड़ा भी संकोच नहीं है।

व्याकरणाचार्य पतंजलि ने कहा है कि ''सच्चा लेखक कभी भाषा–शास्त्रियों के पास जाकर यह नहीं कहता कि– '**पहले मुझे शब्द दो, तब मैं पुस्तक लिखूँगा**।' वह तो शिक्षार्थियों के लिए जब लिखना शुरू करता है तो शब्द अपने आप उसके पास मंडराने लगते हैं– पहचानने और चुनने का विवेक तथा धीरज होना चाहिए।''

;अपद्ध इस मार्ग में एक बड़ी बाधा हमारी उधारजीविता की प्रवृत्ति भी है। कुछ भारतीय लेखकों व मनीषियों को हर बात में अंगरेजी का मुँह ताकने की आदत पड़ गयी है। वे यह भूल जाते हैं कि अंग्रेजी की अट्टालिका भी लैटिन की नींव पर खड़ी है तो फिर हिन्दी को समृद्ध बनाने के लिए संस्कृत का आधार ग्रहण करने में संकोच क्यों ?

यहाँ एक रोचक उदाहरण देखा जा सकता है। भारत को कोई भी सामान्य व्यक्ति संख्याओं को दस गुना बढ़ाकर अधिकाधिक गिनती तक ले जाना जानता है। हजार, दस हजार से लेकर नील, पद्म, महापद्म शंख, महाशंख (सौ शंख) इत्यादि। बाइस अंकों की या संख्या भारतीयों के लिए अनजानी नहीं। इसके विपरीत अंग्रेजी में केवल करोड़, विलियन (दस अरब) तथा ट्रिलियन (दस खरब) अस्तित्व आया। इस लिहाज से भी अंग्रेजी हिन्दी से पीछे है। प्राचीन भारतीय गणितज्ञों, खगोलशास्त्रियों और नक्षत्रविदों की प्रतिभा का बहुत कुछ अंश अब भी हिन्दी को संस्कृत से प्राप्त है। उसके रहते हिन्दी को अकिंचन मानना गलत है। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि हिन्दी को अवैज्ञानिक और तकनीकी भाषा के रूप में विकसित करने के मार्ग में कई समस्याएँ होने पर भी स्थिति एकदम निराशाजनक नही है।

सन्दर्भ

1. डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, भाषाशिक्षण, वाणी प्रकाशन, 21–ए, दरियागंज, नयी दिल्ली–110002, 1992
2. डॉ. रामविलास शर्मा, पश्चिम एशिया और ऋग्वेद, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली वि.वि. पृ. 18

प्राचार्य
आर.डी.एस. पी.जी. कॉलेज कुसांव, भाऊपुर जौनपुर

•••••